`

जैन द्रव्यानुयोग एवं आधुनिक विज्ञान : एक सूक्ष्म चर्चा

डॉ. पारसमल अग्रवाल
प्रोफेसर भौतिक विज्ञान (Retd.)
11, भैरवधाम कॉलोनी,
सेक्टर 3, उदयपुर (राज.)

आधुनिक विज्ञान एवं जैन दर्शन दोनों में महत्वपूर्ण मूलभूत समानता यह है कि दोनों यह मानते हैं कि किसी भी द्रव्य का निर्माता या विनाशक कोई भी नहीं है। इस सृष्टि में, जैन दर्शन के अनुसार, जितनी संख्या में आत्माएं है वे सदैव उतनी ही रहती हैं व जितनी संख्या में पुद्गल परमाणु हैं वे भी उतने ही रहते हैं (पुद्गल परमाणु आधुनिक विज्ञान में परिभाषित एटम (atom) सें बहुत बहुत सूक्ष्म होता है)। विज्ञान का ऊर्जा अविनाशिता का नियम इसी तरह के तथ्य को व्यक्त करता है।

उक्त कथन का अर्थ यह नहीं है कि आधुनिक विज्ञान या जैन दर्शन की शब्दावली में विनाश एवं निर्माण जैसे शब्द नहीं हैं। दोनों में विनाश एवं निर्माण की भी चर्चा होती है। सोने के कंगन को जब स्वर्णकार गलाकर सोने के हार में बदलता है तब यह कहा जाता ही कि सोने के हार का निर्माण स्वर्णकार ने किया है। सोने के कंगन का विनाश हुआ है। परन्तु जैसे यह नहीं कहा जाता है कि सोने का निर्माण स्वर्णकार ने किया है, उसी तरह आधुनिक विज्ञान एवं जैन दर्शन उस अविनाशी को सदैव ध्यान में रखते हैं। जहां किसी के निर्माण एवं विनाश के होने पर भी वह ज्यों का त्यों रहता है। आचार्य उमास्वामी ने निम्नांकित सूत्रों द्वारा इस तथ्य को निरूपित किया है –

सद्द्रव्य लक्षणम् ।। तत्त्वार्थसूत्र 5.29।।

उत्पाद्व्यय ध्रौव्यं युक्तं सत् ।।तत्त्वार्थसूत्र 5.30।।

इन सूत्रों का अभिप्राय यह है कि द्रव्य का लक्षण सतपना है एवं सत वह है जो उत्पाद एवं व्यय सहित ध्रुव हो।

यह विषय महत्त्वपूर्ण एवं गहन है। कई तरह समझने में भूलें हो सकती हैं, अतः विशेष विस्तार हेतु प्रश्न–उत्तर प्रक्रिया द्वारा कुछ तथ्यों को समझना उचित होगा।

प्रश्न 1 सोने के कंगन के सोने के हार में बदलने में सोने का विनाश एवं निर्माण नहीं होता है किन्तु कोयले के जलने में कोयले का विनाश होता है। आधुनिक विज्ञान के अनुसार कोयले के जलने में कौन शाश्वत रहता है ?

उत्तर :

रसायन विज्ञान यह अच्छी तरह बताता है कि कोयले का मुख्य भाग कार्बन होता है जिसके हवा में जलने से कार्बन डाइ आक्साइड गैस एवं ऊष्मा पैदा होती है। इसके अतिरिक्त कोयले में अन्य कई तरह के रासायनिक पदार्थ होते हैं जो हवा से संयोग करके कई तरह की गैसें व राख बनाते हैं। किन्तु इस जलने की क्रिया में एक भी रासायनिक परमाणु का विनाश या निर्माण नहीं होता है। कार्बन के जलने के बाद भी कार्बन की उतनी ही मात्रा कार्बन डाइ ऑक्साइड गैस में रहती है।

प्रश्न 2 आपने उक्त उत्तर में बताया कि जलने की क्रिया में किसी भी रासायनिक परमाणु का विनाश या निर्माण नहीं होता है। किन्तु परमाणु विस्फोट के समय यूरेनियम परमाणुओं का विनाश होकर छोटे छोटे नये रासायनिक परमाणुओं का निर्माण होता है। वहां शाश्वत कौन है ?

उत्तर :

वहां ऊर्जा शाश्वत हैं। ऊर्जा, ध्वनि, प्रकाश, सोना, मिट्टी, यूरेनियम आदि कई रूपों में होती है। प्रकाश की ऊर्जा का एक कण रासायनिक परमाणु की तुलना में बहुत सूक्ष्म होता है। जैसे : हाइड्रोजन के

एक रासायनिक परमाणु की ऊर्जा सोडियम से निकले हुए पीले प्रकाश के एक कण (फोटॉन) की ऊर्जा से 44.4 करोड़ गुना होती है।

प्रश्न 3 क्या आधुनिक विज्ञान के अनुसार उक्त प्रकाश की ऊर्जा का कण सबसे छोटा कण है ?

उत्तर :

नहीं। सोडियम से निकले हुए पीले प्रकाश के एक कण की ऊर्जा 509 किलो हर्ट्ज के रेडियो ट्रांसमीटर से निकली हुई रेडियो तरंग के एक कण से एक अरब गुना अधिक होती है। यानी जिसे हम प्रकाश ऊर्जा का सूक्ष्म कण कहते हैं वह भी स्थूल है व कई सूक्ष्म कणों के रूप में बदल सकता है।

प्रश्न 4 आधुनिक विज्ञान के अनुसार क्या ऐसा कोई छोटे से छोटा कण है जिसे आधार माना जा सकता हो व समस्त पदार्थ उस तरह के कई कणों के संयोग के रूप में समझे जा सकते हों ? जैन दर्शन में इस तरह के कण को क्या कहा जाता है ?

उत्तर :

आधुनिक विज्ञान अभी तक इतने सूक्ष्म कण तक नहीं पॅहुचा है। मूलभूत कणों (Elementary Particles), क्वार्क (Quark), ग्लुआन (Gluon) आदि का विवरण आज के भौतिक विज्ञान में पाया जाता है। नवीन अनुसंधान संभवतया कभी सूक्ष्मतम कण की तरफ ले जाने में समर्थ हो सकेगें । प्रश्न में जिस तरह के सूक्ष्मतम मूलभूत कण की बात की गई है उसे जैन दर्शन में ''अविभागी पुदगल परमाणु'' या 'पुद्गल परमाणु' या 'परमाणु' या 'अणु' नामों से व्यक्त किया जाता है। दो या दो से अधिक पुद्गल परमाणुओं के समुह को स्कन्ध कहा जाता है। जैन दर्शन के अनुसार प्रकाश या रेडियो तरंगो से भी अत्यन्त सूक्ष्म कर्म – वर्गणा होती है। यह कर्म – वर्गणा भी स्कन्ध हैं, यानी एक पुद्गल परमाणु तो कर्म – वर्गणा से भी सूक्ष्म होता है।

प्रश्न 5 क्या उक्त अविनाशी पुद्गल परमाणु का अस्तित्व आधुनिक विज्ञान सम्मत है ?

उत्तर

कुल मिलाकर ऊर्जा अविनाशिता का नियम एवं पुद्गल परमाणुओं की कुल संख्या की शाश्वतता का नियम संभवतया एक ही तथ्य को निरूपित करते हैं। जो कुछ भी भौतिक एवं रासायनिक क्रिया में होता है वह जैन दर्शन के अनुसार पुद्गल परमाणुओं के संयोग–वियोग से होता है। यह तथ्य भी आधुनिक विज्ञान से मेल खाता है। मूलतः (पुद्गल परमाणु का) विनाशक या निर्माता कोई नहीं है जैन दर्शन का यह तथ्य भी आधुनिक विज्ञान का आधार स्तम्भ है। भौतिक पदार्थ का सूक्ष्मतम खण्ड कितना सूक्ष्म हो सकता है इसकी सीमा भौतिक विज्ञान अभी नहीं जान सका है। जब आधुनिक भौतिक विज्ञान सूक्ष्मतम खण्ड को समझ लेगा (कब ? कुछ नहीं कहा जा सकता है !) व ऐसे सूक्ष्मतम खण्ड को किसी यंत्र द्वारा परख सकेगा, तब भी यदि कर्म वर्गणा जैसे स्कन्ध प्रयोगशाला में पकड़ में न आए तब यह कहने की संभावना बनती है कि पुद्गल परमाणु का अस्तित्व भौतिक विज्ञान सम्मत नहीं है। यानी आज की स्थिति में समर्थन की दिशा में कई बिन्दु हैं, विरोध की दिशा में कोई भी बिन्दु नहीं है।

प्रश्न 6 'सोना पुद्गल द्रव्य है' – क्या यह कथन उचित है ?

उत्तर

यदि इस कथन का उद्देश्य यह बताना हो कि सोना जीवद्रव्य न होकर पुद्गल है तो इस अपेक्षा यह कथन उचित है। यदि इस कथन से यह अर्थ बताने का भाव हो कि सोना द्रव्य होने के कारण शाश्वत होना चाहिए तो यह कथन त्रुटिपूर्ण होगा। जैसा कि पूर्व में कहा गया है – द्रव्य वह है जो सत हो, व सत वह है जो उत्पाद, विनाश एवं ध्रुव युक्त हो। पुद्गल का एक परमाणु शाश्वत (ध्रुव) रहता है किन्तु उसकी अवस्था (पर्याय) प्रति समय बदलती रहती है। यानी पुद्गल का परमाणु अवस्था की अपेक्षा से उत्पाद एवं विनाश को प्राप्त होता है किन्तु पुद्गल परमाणु के रूप में शाश्वत रहता है। अतः पुद्गल परमाणु सत है व द्रव्य है। जिसे हम सोना कहते है उसका एक कण (रासायनिक परमाणु) भी कई पुद्गल परमाणुओं का समुह या स्कन्ध है। उसमें प्रत्येक परमाणु सत है किन्तु समुह सत नहीं है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि सोने का

एक कण कई पुद्गल परमाणुओं के एक विशेष रूप में एकत्रित समुह का नाम है। वे ही पुद्गल परमाणु अन्य रूप में एकत्रित होकर चांदी या लोहा या और कुछ भी नाम पा सकते हैं। चूंकि समुह का शाश्वत होना अनिवार्य नहीं है अतः इस अपेक्षा से सोना शाश्वत नहीं है।

इस तरह एक अपेक्षा से सोना पुद्गल द्रव्य कहा जा सकता है व एक अपेक्षा से पुद्गल द्रव्य नहीं है। इन दोनों तथ्यों को अनेकान्त शैली में यों कहा जाता है कि सोना निश्चय से पुद्गल द्रव्य नहीं है किन्तु व्यवहार से पुद्गल द्रव्य है। आचार्य कुन्दकुन्द ने सूत्र रूप में नियमसार गाथा 29 में यही तथ्य इस रूप में समझाया है कि निश्चय से अविभागी पुद्गल परमाणु द्रव्य है किन्तु व्यवहार से स्कन्ध भी पुद्गल द्रव्य है।

आधुनिक भौतिक विज्ञान में जब नाभिकीय भौतिकी में एक विद्यार्थी यह पाता है कि हाइड्रोजन के एटम हीलियम में बदले जा सकते हैं या यूरेनियम के एटम प्लूटोनियम में बदले जा सकते हैं या अन्य किसी तरह से सोने के एटम अन्य धातु में बदले जा सकते हैं तब पुद्गल परमाणु की अविनाशिता का खण्डन नहीं होता है।

यहां एक तथ्य और ध्यान देने योग्य है। रसायन विज्ञान में सोने के एटम के विनाश एवं निर्माण की बात नहीं की जाती है किन्तु नाभिकीय भौतिकी में सोने के एटम के विनाश एवं निर्माण की चर्चा होती है व अध्ययन का विषय बनता है। सोने का एटम एक तरह से रसायन विज्ञान में शाश्वत है किन्तु नाभिकीय भौतिकी में अशाश्वत है। इस दृष्टि से ये दोनों विज्ञान परस्पर विरोधी प्रतीत होते है। ज्ञानी को विरोध नजर नहीं आता है क्योंकि वह जान रहा होता है कि किस अपेक्षा से सोने का एटम अविनाशी है व किस अपेक्षा विनाशी।

इस चर्चा का उद्देश्य कई विरोधाभासों को सुलझाने में उपयोगी हो सकता है। जैसे यह प्रश्न उक्त चर्चा के प्रकाश में हल हो सकता है कि जीव यदि शाश्वत होता है व प्रत्येक मनुष्य यदि जीव है तो प्रत्येक मनुष्य भी शाश्वत होना चाहिए। किन्तु यह देखा जाता है कि प्रत्येक मनुष्य अशाश्वत है। ऐसा क्यों ?

कुल मिलाकर इस तरह की शाश्वत–अशाश्वत की गुत्थी को सुलझाने के लिए यह आवश्यक है कि हम यह समझें कि प्रत्येक आत्मा एक जीव द्रव्य है, प्रत्येक पुद्गल परमाणु एक पुद्गल द्रव्य है। ऐसा कथन करते समय जीव एवं पुद्गल को और अधिक सूक्ष्मता से समझते रहने की आवश्यकता तब तक बनी रहेगी जब तक शाश्वत जीव द्रव्य एवं शाश्वत पुद्गल द्रव्य दृष्टि में न आ जायें। जब तक विनाशी जीव एवं विनाशी पुद्गल ही नजर आते रहेंगे तब तक यह मान लेना है कि न तो जीव द्रव्य समझ में आया है और न पुद्गल द्रव्य समझ में आया है। शाश्वत जीव द्रव्य एवं शाश्वत पुद्गल द्रव्य का अस्तित्व हमें एक प्राणी में नजर आने लगे तब यह समझना चाहिए कि जीव एवं पुद्गल का भेद समझ में आया है। जैन दर्शन में इस समझ को भेद विज्ञान कहा जाता है।

जैसे हार एवं कंगन की पर्याय के बदलने की बात एवं सोने की शाश्वतता की बात करना कठिन नहीं है उसी तरह एक जीव का पुरूष पर्याय से मरण होकर नवीन स्त्री पर्याय में जन्म लेने की बात समझना कठिन नहीं है। ऐसी स्थिति को हम सरलता से समझ लेते हैं कि सुरेश की मृत्यु हुई व संगीता के रूप में उसी जीव का पुनर्जन्म हुआ। किन्तु कठिन बात यह समझना है कि सोना अपने आप में कई पुद्गल परमाणुओं का समुह है व यह समुह (यानी, सोना) शाश्वत नहीं है : इस समुह में जो पृथक् – पृथक् पुद्गल परमाणु हैं वे शाश्वत हैं। प्रत्येक पुद्गल परमाणु अपने आप में उसी तरह सोना नहीं है जिस तरह प्रत्येक ईंट अपने आप में मकान या दुकान नहीं होती है। उसी तरह से आत्मा की अपेक्षा कठिन बात यह समझना है कि जिसे हम सामान्यतया 'जीव' कहते हैं – जो 'जीव' सुरेश के शरीर रूप में था व उससे निकलकर नये संगीता के रूप में प्रकट हुआ – वह 'जीव' जीव द्रव्य व कई – कई कर्म वर्गणा के पुद्गल परमाणुओं का समुह है। यह समुह शाश्वत नहीं है। पृथक् – पृथक् रूप से जीव द्रव्य भी शाश्वत है व कर्म – वर्गणा का प्रत्येक पुद्गल परमाणु भी शाश्वत है। जीव एवं कर्म – वर्गणा को मिलाकर समुह रूप ''जीव'' को शाश्वत

जीव द्रव्य मानना एक बड़ी भूल होगी। इस भूल को निकालने हेतु ही जैनाचार्यों ने विस्तार से समयसार एवं वृहद्संग्रह जैसे ग्रन्थोंमें त्रिकाली ध्रुव (शाश्वत) जीव द्रव्य को रेखांकित किया है।

प्रश्न 7 : जीव के साथ रहने वाला शरीर जीव नहीं है यह हमारे समझ में आता है। जीव के साथ रहने वाली कर्म वर्गणा जीव द्रव्य नहीं है यह भी हमारे समझ में आता है। किन्तु जीव के साथ रहने वाले क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष आदि भाव जीव द्रव्य से भिन्न हैं या अभिन्न ?

उत्तर

यह प्रश्न अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है व कई विधियों से मर्म समझने की आवश्यकता है। 'हां' या 'नहीं' उत्तर से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा।

भौतिक विज्ञान में भी इसी तरह की स्थिति आती है जिसका समाधान करते हुए यह ध्यान में रखा जाता है कि प्रश्न का प्रयोजन क्या है। स्वच्छ विशाल झील में जो पानी नीला दिखाई देता है वही झील का पानी झील से एक बर्तन में निकालने पर नीला नहीं दिखाई देता है। वहां भी यह प्रश्न बनता है कि यह नीलापन किसका ? यदि पानी का रंग नीला होता है तो बर्तन में भी वैसा ही दिखना चाहिए था। यदि झील से सारा पानी निकल जाये तो झील भी नीली नहीं दिखाई देती है। अतः झील की जमीन का रंग भी झील के पानी के नीलेपन का कारण नहीं है।

इसी प्रकार सूर्य का रंग दोपहर को सफेदी लिए हुए होता है व प्रातःकाल एवं सन्ध्या को लालिमा लिए हुए होता है। क्या सूर्य बदल जाता है ? वस्तुतः जो कुछ हमें दिखाई देता है वह न केवल सूर्य अपितु वायुमण्डल आदि के कई तरह के प्रभाव सहित सूर्य दिखाई देता है। जिस समय भारत में सूर्यास्त होते समय सूर्य लाल दिखाई देता है उसी समय वही सूर्य लन्दन में दोपहर के सूर्य के रूप में सफेद चमकीला दिखाई देता है। अतः लालिमा सूर्य की है या नहीं ? या सूर्य का रंग लाल है या नहीं ? इस तरह के प्रश्नों का उत्तर मात्र 'हां' या 'ना' से समझ में नहीं आ सकता है।

इस वर्णन का सारांश यह है कि दो या दो से अधिक पदार्थों की सम्मिलित 'पर्याय' में कुछ ऐसी विशेषताएं हो सकती हैं जो उनमें से किसी भी पदार्थ में न हो। भौतिक विज्ञान की परंपरा ऐसी स्थिति में सदैव यह जानने की रहती है कि कुल मिलाकर पानी नीला क्यों दिखाई दे रहा है या सूर्य लाल क्यों दिखाई दे रहा है। भौतिक विज्ञान इसमें समय खर्च नहीं करता है कि सूर्य लालिका युक्त होता है या नहीं।

इस विश्लेषण का प्रस्तुत प्रश्न के सन्दर्भ में महत्त्व यह जानना है कि क्रोध, राग – द्वेष आदि का कारण आत्मा एवं कर्म – वर्गणा का एक साथ विशेष रूप से विद्यमान होना है। राग – द्वेष न तो आत्मा के स्वभाव हैं और न अजीव कर्म – वर्गणा के।

राग और आत्मा की भिन्नता या अभिन्नता के संबन्ध में जो जिज्ञासा हो सकती है उसका दूसरा प्रयोजन यह हो सकता है कि राग – द्वेष से निवृत्ति हेतु वर्तमान में विद्यमान राग – द्वेष का क्या करें ? इस प्रयोजन से पूछे गए प्रश्न का उत्तर विस्तार से आचार्यो ने दिया है। आचार्य समझाते हैं कि अपने को शुद्ध एवं दर्शन – ज्ञान मे परिपूर्ण मानकर अपनी ही आत्मा में स्थित रहने से राग – द्वेष क्षय को प्राप्त हो जाते हैं (देखिए समयसार गाथा 73)।

सात तत्वों का निरूपण किया जाता है। वहां आश्रव तत्त्व एवं जीव तत्त्व की भिन्नता को रेखांकित करना भी उक्त तथ्य की पुष्टि करता है। जिसने राग – द्वेष यानी आश्रव तत्व को जीव तत्त्व में सम्मिलित किया है उसने आत्मा नहीं समझा है व वह सम्यदृष्टि नहीं है। (देखिए समयसार गाथा 201, 202)।

ज्ञानी रागद्वेष को अपना नहीं मानता है (समयसार गाथा 199, 200), व अज्ञानी अपना मानता है इस हेतु से भी यह कहा है कि ज्ञानी की आत्मा राग द्वेष से भिन्न व अज्ञानी के राग द्वेष अज्ञानी से अभिन्न होते हैं। (देखिए समयसार गाथा 210, 211, 278 – 281, 316, 318)।

आधुनिक मनोवैज्ञानिक वेन डायर भी अपने पाठकों को सांसारिक दु:खों से निवृत्ति, आध्यात्मिक आनन्द एवं अच्छे स्वास्थ्य हेतु उनकी पुस्तक योअर सेक्रेड सेल्फ (Your Sacred Self) में यह सुझाव देते हैं

कि मस्तिष्क में आने वाले समस्त विकल्पों (राग – द्वेष) को भी अपनी आत्मा से पृथक पदार्थ की तरह साक्षीरूप में देखने का अभ्यास करना चाहिए। उन्हीं के शब्दों में –

''Try to view your thoughts as a component of your body/mind. Think of thoughts as things. Things that you have the capacity to get outside of and observe.'' इसका हिन्दी भावानुवाद निम्नानुसार है :–

''आपके विचारों को आपके शरीर/मन के हिस्से के रूप में देखने का प्रयास करो। ऐसी धारणा बनाओ कि ये विचार वस्तुओं की तरह हैं जिनसे आप बाहर आकर दर्शक की तरह देखने की सामर्थ्य रखते हो।''

इसी तथ्य का विस्तार करते हुए आगे शान्ति प्राप्ति की विधि बताते हुए वेन डायर यह भी लिखते हैं कि पहले तो आप अपने विचारों के दृष्टा बनना चाहोगे, बाद में आप इस तरह के विचारों के दृष्टा वाले भाव के भी दृष्टा होना चाहोगे। उन्हीं के शब्दों से ''First you want to watch your thoughts. Then you want to watch yourself watching your thoughts.''

प्रश्न 8 जीव द्रव्य एवं पुद्गल द्रव्य के अतिरिक्त और कौन कौन द्रव्य जैन दर्शन में वर्णित किए गए है ?

उत्तर :

कुल 6 प्रकार के द्रव्य वर्णित हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं : (1) जीव (2) पुद्गल (3) धर्म (4) अधर्म (5) आकाश (6) काल। ध्यान देने योग्य बात यह भी है कि द्रव्यों की संख्या 6 न होकर द्रव्यों के प्रकार की संख्या 6 है। चूंकि प्रत्येक जीव एक द्रव्य है व प्रत्येक पुद्गल परमाणु एक द्रव्य है अतः द्रव्यों की कुल संख्या अनन्तानन्त होती है।

सभी द्रव्यों को अवकाश देने की सामर्थ्य रखने वाला आकाश (Space) जैन दर्शन के अनुसार एक द्रव्य है । द्रव्य की परिभाषा के अनुसार यह भी शाश्वत एवं अनिर्मित या अकृत्रिम है । आकाश का एक भाग

ऐसा होता है जहां केवल आकाश ही होता है व शेष 5 द्रव्य नहीं रहते हैं। ऐसे भाग को अलोकाकाश कहा जाता है। इसके विपरीत जिस भाग में अन्य सभी 5 द्रव्य रहते हैं उसे लोकाकाश कहते हैं। लोकाकाश का आयतन 343 घन राजु होता है। राजु इकाई कितने प्रकाश वर्ष के बराबर होती है यह अनुसंधान का विषय एवं स्वतंत्र लेख का विषय है।

पूरे लोकाकाश में सर्वत्र एक धर्म द्रव्य व एक अधर्म द्रव्य भी निवास करते हैं। ये द्रव्य भी अनिर्मित एवं शाश्वत हैं। अपने आप में प्रत्येक द्रव्य कई गुणों का समुह होता है व उसको कोई बना नहीं सकता है व मिटा नहीं सकता है, उसको बने रहने हेतु किसी अन्य द्रव्य के सहारे की आवश्यकता नहीं होती है, व उसका कोई भी मूल गुण कभी भी समाप्त नहीं हो सकता है। सभी द्रव्य पृथक् – पृथक् होते हुए भी अन्य द्रव्यों की क्रियाओं में निमित्त बनते हैं। जैसे सेब के जमीन पर आने में पृथ्वी का गुरूत्वाकर्षण निमित्त बनता है। सेब एवं पृथ्वी का गुरूत्वाकर्षण तो एक पुद्गल स्कन्ध से दूसरे पुद्गल स्कन्ध के बीच का व्यवहार बताता है। पुद्गल – पुद्गल के अतिरिक्त जीव पुद्गल के बीच एवं इसी तरह अन्य द्रव्यों के बीच भी विशिष्ट प्रकार का व्यवहार होता है। धर्म द्रव्य का व्यवहार यह होता है कि वह जीव एवं पुद्गल को गमन (Motion) करने में निमित्त होता है। धर्मद्रव्य गमन कराता नहीं है किन्तु गमन करने को उद्यत जीव एवं पुद्गल को गमन कराने में एक अदृश्य शक्ति की तरह निमित्त बनता है। लोकाकाश के बाहर धर्म द्रव्य नहीं है अतः लोकाकाश के बाहर जीव एवं पुद्गल का गमन संभवन नहीं होता है। इसी तरह अधर्म द्रव्य का व्यवहार जीव एवं पुद्गल को ठहराने में निमित्त बनने का है। काल द्रव्य भी लोकाकाश में सर्वत्र व्याप्त है । लोकाकाश के प्रत्येक प्रदेश में एक काल द्रव्य होता है जिसे कालाणु कहा जाता है । प्रत्येक कालाणु शाश्वत एवं अनिर्मित है। प्रत्येक कालाणु उस स्थान पर विद्यमान अन्य द्रव्यों की पर्याय के परिणमन में निमित्त होता है।

धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य, आकाश (सीमित लोकाकाश + असीमित अलोकाकाश) एवं कालाणु के अस्तित्व एवं गुणधर्मो की चर्चा अपने आप में विज्ञान के लिए भी गूढ अध्ययन का विषय है। मोटे रूप से

स्थान (Space) एवं समय (Time) की चर्चा भौतिक विज्ञान के लिए उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितनी भौतिक ऊर्जा (पुद्गल) की। सापेक्षता की खोज के बाद यह माना जाने लगा कि यह ब्रह्माण्ड त्रिविमीय (Three Dimensional) न होकर चार विभीय (Four Dimensional) है। इसका स्थूल अभिप्राय यह है कि प्रत्येक स्थान पर समय भी निहित है – इसके मर्म को आत्मसात करना भी अधिकांश व्यक्तियों के लिए दुष्कर है। इन्द्रिय ज्ञान पर आधारित सामान्य विवेक बुद्धि तो स्थूल पुद्गल स्कन्धों के ज्ञान, स्थूल पैमाने मे मापे जाने वाली जगह एवं घड़ी से मापे जाने वाले समय एवं ऑखों को दिखाई देने वाली सशरीर जीव राशि तक ही सीमित है। भौतिक विज्ञान की आज की स्ट्रींग थ्योरी (String Theory) तो दूर क्वाण्टम फिल्ड थ्योरी एवं सापेक्षता सिद्धान्त की समझ भी सामान्य विवेक बुद्धि से परे है। सापेक्षता सिद्धान्त में चार विमाओं (3 आकाश की + 1 समय की) की आवश्यकता होती है। स्ट्रींग थ्योरी में कई विमाओं की आवश्यकता होती है। 10 विमाओं की आवश्यकता की बात भी होती है। इन 10 विमाओं के भौतिक रूप में क्या किसी रूप में धर्म द्रव्य या अधर्म द्रव्य से संबन्धित कोई दिशा भी है ? इस तरह के प्रश्न पूछने की स्थिति स्टींग थ्योरी या इससे श्रेष्ठतर थ्योरी के विकास के बाद आ सकती है। अभी तो विज्ञान के इस क्षेत्र में जिज्ञासा अधिक व हल कम है। अति सूक्ष्म कणों की समझ एवं अति विशाल गैलेक्सी की समझ के मामले में विज्ञान बहुत आगे बढ़ने के उपरांत भी बहुत पीछे है। किन्तु हमें यह नहीं भूलना है कि आनंद, शांति का जो स्रोत है वही प्रयोजनभूत है व ऐसा प्रयोजनभूत तत्त्वज्ञान आज भी उपलब्ध है।